P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-4* ISSUE-9* May- 2017
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

# ज्ञानमार्गी संत काव्यधारा और साहित्य

**नीतू शर्मा**
एसोसिएट प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग,
आई. टी. कॉलेज,
लखनऊ

**सारांश**

निर्गुण ज्ञानमार्गी संत काव्यधारा और संतो की भक्ति भावना न्यायप्रियता और निष्पक्षता पर विचार करते हुए संत काव्यधारा और निर्गुण काव्यधारा के नाम से अभिहित किया गया है। इन कवियों ने तत्कालीन धार्मिक मान्यताओं को अपने जीवन के व्यापक अनुभव के आधार पर जनसामान्य के लिये हृदयस्पर्शी बनाया, यहीं नहीं इन्होंने हिन्दू और मुसलमान में भावात्मक एकता लाने का प्रयास किया इस प्रकार इनके काव्य में धार्मिक और आध्यात्मिक चेतना के साथ सामाजिक चेतना भी है इन कवियों का सामंती समाज के वर्णवादी मूल्यों के प्रति आक्रोश भी है इसके लिये सन्तों ने पाण्डित्य और पुस्तकीय ज्ञान के वाद–विवाद को व्यर्थ मानते हुए अपनी अनुभूतियों की निश्छलता और शिल्प की अनगढ़ता के द्वारा अनुभवों को महत्व दिया ।

**मुख्य शब्द :** ज्ञानमार्गी, धार्मिक, काव्यधारा

**प्रस्तावना**

संतो की परम्परा का आरंभ 15 वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में माना जाता है स्वामी रामानन्द कबीरदास के दीक्षा गुरू थे। संत रविदास सेना नाई पीपा धन्ना आदि उनके गुरूभाई थे। यह कहा जाता है कि स्वामी रामानन्द के उपदेशों से प्रभावित होकर ही उन्होने संत परम्परा का आरंभ किया था। लेकिन इससे पहले ही संत परम्परा की नींव पूर्व में बौद्ध धर्म वज्रयान एवं सहजयान में बदल गया था। वैष्णव सम्प्रदाय और उसमें कई बातों का आदान प्रदान हुआ इससे दोनो ही निकट आ गये थे इसी प्रकार का वैचारिक सामंजस्य नाथपंथ और स्थानीय वैष्णव सम्प्रदाय के बीच महाराष्ट्र और राजस्थान में रहा। इसी से पूर्व की ओर से संत जयदेव दक्षिण की ओर से संत ज्ञानदेव और नामदेव पश्चिम की ओर संत बेनी और सधना और कश्मीर की ओर से संत ललद्येव का उदय रामानंद से पहले ही हो चुका था। इसके बाद कबीर आदि संतो की एक लम्बी परम्परा हिन्दी में चली इससे कई पन्थों और गद्दियों की स्थापना हुई जैसे नानक देव पंथ, दादू पंथ निरंजनी सम्प्रदाय मलूक पंथ कबीर पंथ आदि । 13 वीं शताब्दी में कबीरदास ने संत मत के निश्चित सिद्धान्तों का प्रसार – प्रचार किया। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इन्हें ही निर्गुण भक्ति का प्रवर्तक माना है।

**ज्ञानमार्ग : अर्थ एवं दृष्टिकोण**

शंकराचार्य ने ज्ञान और भक्ति एवं निर्गुण और सगुण भक्ति के विरोध की स्थापना करते हुए निर्गुण को ज्ञान से सम्बद्ध किया इसी कारण निर्गुण ब्रहम को प्राप्त करने का साधना को ज्ञान कहा गया है यह वास्तव में अन्तर्ज्ञान है। यह सहज ही बिना किसी भक्तिमार्गीय पद्धति के साधनों से उत्पन्न होता है इसलिये। इसे सहजज्ञान कहा गया । शंकराचार्य का ज्ञान सैद्धान्तिक और बौद्धिक चिन्तन का द्धन्द्ध है। कबीर आदि संत कवियों का ज्ञान अनुभव की देन है। यों तो संत कवियों ने निर्गुण मार्ग और ज्ञान मार्ग को सैद्धान्तिक रूप में अपनाया ,लेकिन उसके व्यावहारिक पक्ष पर ही बल दिया

**निर्गुण : अर्थ एवं स्वरूप**

सामान्य रूप से निगुर्ण शब्द का अर्थ गुण सहित होता है। लेकिन संतकाव्य में निर्गुण साहित्य का प्रतीक न होकर गुणातीत की ओर संकेत करता है इससे परब्रम्ह के लिये निर्गुण शब्द का प्रयोग हुआ है जो सत्व, रजस, और तमस तीनों गुण से अतीत है वह अनुभूति और वाणी से परे है वह घट–घट का वासी है निर्गुण के स्वरूप के विषय मे कबीर ने कहा है–

**संतो, धोखा कासूं कहिये।**
**गुन में निरगुन ,निरगुन में गुन बाढ छांड़ि क्यूँ जाई।**
**अजर–अमर कयै सबक कोई अलख न कथणां जाइ**
**नाति–स्वरूप–वरण नहिं जाके घटि–घटि रहयों समाई**
**प्यंड ब्रम्हांड कथै सब कोई वाके आदि गुरू अंत न होई**

**प्यंड ब्रम्हांड छाँड़ि जे कहिये कहै कबीर हरि सोई।।**

अर्थात हे संतो। मै धोखे की बात किससे कहूँ गुण में ही निर्गुण है और निर्गुण में ही गुण उसका ध्यान छोड़कर कहाँ बहता फिरा जाये लोग उसे अजर कहते है। अमर कहते है पर सच्चाई यह है कि यह अलक्ष्य है। उसका वर्णन नही किया जा सकता है उसको कोई स्वरूप नही है। कोई वर्ण नही है वह घट घट में समाया रहता है। लोग पिंड और ब्रम्हांड की बातें करते है किन्तु उसका न तो आदि और न अंत। अतः जो पिंड और ब्रम्हांड से भी परे है , वह हरि है। ऐसा जिसका रूप नही रेखा नही सूर्य चन्द्र, पवन, पानी भी नही, वही संतकवियों का निर्गुण है।

**भक्ति आन्दोलन और निर्गुण संत**

आबिद हुसैन ने लिखा है अगर यूनानियों की तरह जो दूसरी शती ईस्वी में बख्तर से आये थे अपने और अपनी संस्कृति के उद्गम स्थान से बहुत अरसे तक उनका नाता टूटा रहता अथवा अगर उनकी संस्कृति सीरियन और हूणों की तरह आदिम होती है तो वे हिन्दू समाज में घुलमिलकर एकात्म हो जाते। लेकिन पहले तो वे एक समुन्नत अंतर्राष्ट्रीय संस्कृति के प्रतिनिधि थे दूसरे व भारत के बाहर उस संस्कृति के केन्द्रो से इनमें इस्लामी जगत का राजनीतिक केन्द्र बगदाद भी शामिल था जिसका महत्व आज नाममात्र को रह गया है बराबर सम्पर्क बनाये हुय रहे इन कारणों से उन्हे पूरी तरह भारतीय होने मे समय लगा।

मध्यकाल में सामान्य जनता दो दुश्चक्रो के नीचे पिसे जा रही थी पहल यह कि हिन्दी जाति वर्ण श्रम धर्म पर आधारित धर्म की जटिलताओं से युक्त थी तो उधर इस्लाम भी किसी प्रकार से धार्मिक कट्टरता से अलग नही था दूसरा यह कि उत्तर भारत में सिद्धों नाथो के कर्मकाण्ड के कारण सच्ची धर्म भावना का ह्रास हो रहा था । यह सच है कि दक्षिण से आने वाली भक्ति की लहर ने हिन्दू मुसलमान दोंनों कों प्रभावित किया इस प्रकार भक्ति आन्दोलन तो दक्षिण भारत में उत्पन्न होकर उत्तर भारत की ओर बढ़ा –

**''भक्ति द्राविड़ ऊपजी लाए रामानंद**
**प्रकट किया कबीर ने सप्तदीप नवखण्ड।।**

यह ध्यातव्य है कि रामानन्द से पहले आलवारों और नयनारों ने दक्षिण भारत में भक्ति भावना बौद्धों के बढ़ते हुय प्रभाव को कम करने के लिये ही जगायी थी इनसे भक्ति का वह प्रवाह आगे बढ़ते हुए नाथमुनि, रामानुजाचार्य,रामानंद बल्लभाचार्य , मध्वाचार्य , विष्णुस्वामी, निम्बर्काचार्य आदि तक खूब प्रवाहित हुई शैवों में वर्तमान भक्ति का यह प्रवाह नयनारों के मध्य विकसित होकर महाराष्ट्र की ओर मुड़ गया इस प्रवाह को कर्नाटक के पुण्डलोक में देखा जा सकता है वहाँ इसका विकास वैष्णवों और शैवों के मतभेदों को दूर करने के लिये समन्वयात्मक रूप में हुआ। भक्ति आन्दोलन में संतो की भूमिका का प्रकाश डालते हुए महाकवि गजानन माधव मुक्तिबोध ने लिखा है– ''पहल बार शुद्रों ने अपने संत पैदा किय। अपने साहित्य और गीत सृजित किये कबीर रैदास नाभा सिंगा सेना नाई आदि महापुरूषों ने ईश्वर के नाम पर जातिवाद के विरूद्ध आवाज बुलंद की समाज के न्यस्त स्वार्थवादी वर्ग के विरूद्ध नया विचारवाद अवश्यंवभावी था वह हुआ। संक्षेप में भक्ति आन्दोलन का जन–साधारण पर अभूतपर्व प्रभाव पड़ा सामान्य जनता कुलकानि लोकरूढ़ि अंधविश्वास धार्मिकता आडम्बर कटटुरता के विरूद्ध कमर कसकर खड़ी हो गई''।

**प्रमुख संत कवि नामदेव**

इनका जन्म सन 1329 ई को सतारा के नरमी वमनी गांव में हुआ था ये बचपन में ही विरक्त होकर साधु सेवा और सत्संगत करने लगे यों तो उनके गुरू संत बिसोवा खेचर थे, लेकिन उन्होनें संत ज्ञानेश्वर के प्रति भी अपनी अपार श्रद्धा भावना प्रस्तुत की है।संत नामदेव के पद हिन्दी और मराठी दोनो में है चूंकि के जाति के दर्जी थे इसलिये इन्होनें गज, कैची सूई और धागे के माध्यम से भक्ति रहस्य को प्रस्तुत किया है सधुक्कड़ी भाषा मे रचित उनके पदों में निर्गुणोपासना, कर्मकाण्ड आदि का खण्डन तो है ही, इसके साथ ब्रहम का स्वरूप प्रतिपादन भी। एक उदाहरण देखिये–

**''जल तरंग अरूफेन बुदबुदा जलते भिन्न ने होई।**
**रहु परपंचु पारब्रम्ह की लीला,विचरत आन न होई।।**
**मिथिआ भरम अरू सुपन मनोरथ ,सति पदारथु जानिआ।**
**सकित मनसा गुरू उपदेसी ,जागत ही मनु मानिआ।**
**कहत नामदेव हरिकी रचना देजहु रिदै बीचारी।**
**घट–घट जंतरि सरब निरन्तरि ,केवल एक मुरारी।।''**

हिन्दी कवियों मे कबीर का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है उनका जन्म सं 1455 ज्येष्ठ शुक्ला पूर्णिमा चन्द्रवार के दिन हुआ था उनके जन्म के विषय में यह दोहा प्रसिद्ध है–

**'चौदह सौ पचपन साल गये चन्द्रवार इक ठाठ हुए।**
**जेठ सुदी बरसात को पूरनमासी प्रकट भेय।।**

कबीर पन्थियों का विश्वास है कि कबीर का जन्म रामानन्दजी के आशीर्वाद के फलस्वरूप एक विधवा ब्राहम्णी के गर्भ से हुआ था। वह ब्राम्हणी नवजात शिशु के लहरतारा नामक तालाब के समीप छोड़ आई थी। उसी समय वहाँ से नीरू और नीमा नामक जुलाहा दम्पति कही जा रहे थे उन्होनें उस बालक को गोद में ले लिया। उसी शिशु का नाम बाद में कबीर रखा गया।

'काशी में हम प्रकट गये 'रामानन्द चेताए के अनुसार वे काशी में उत्पन्न हुए थे प्रातः वेला में गंगा–स्नान को जाते समय पंचगंगा धार पर स्वामी रामाानन्द से राम शब्द सुनकर कबीर ने उन्हे अपना गुरू बनाया था कबीर जुलाहे का कार्य करते थे। उनकी पत्नी का नाम लोई था जिससे उनके कमाल और कमाली पुत्र–पुत्री भी हुए। कबीर पंथी लोग कबीर को अविवाहित मानते है परन्तु यह मत प्रामाणिक नही माना जा सकता है कबीर ने स्वयं कहा है–

**'नारी तो हम भी करी, जाना नाहिं विचार।**
**जब जाना तब परिहरि, नारी बड़ा बिकार।।**

'बूड़ा वंश कबीर का उपजा पूत कमाल इस अन्तः साक्ष्य के आधार पर यह सिद्ध होता है कि कबीर ने पुत्र का नाम कमाल था स्वामी रामानन्द से दीक्षा देने के पश्चात कबीर ने उनके सिद्धान्तो का प्रचार करना प्रारम्भ किया। कबीर अन्धविश्वासों का दृढ़ता से खण्डन करते थे

सिकन्दर लोदी ने उनकी आलोचना से कुद्ध होकर उन्हे गंगा में डुबोने का आदेश दिया परन्तु उनका बाल भी बाका न हुआ।

**'गंगा लहर मेरी टूट जंजीर, मृगछाला पर बैठे कबीर''।।**

कबीर ने अपने अन्त समय मे काशी छोड़ दी और मगहर चले गये। इस विषय में उन्होनें स्वयं कहा है,

**''क्या काषी, क्या असर मगहर, राम हृदय बस मोरा।**
**जो काषी तन तजै कबीरा, रामै कौन निहोरा।।''**

उनकी मृत्यु 1505 में हुई इस विषय में पद दोहा प्रसिद्ध है–

**संवत पन्द्रह सौ और पाँच भौ मगहर किया गौन।**
**अगहन सुदी एकादशी टलौं पौन में पौन।।**

कुछ विद्वानों का यह मत है कि उनकी मृत्यु संवत् 1557 माघ सुदी एकादशी के दिन हुई।

कबीर का प्रामाणिक ग्रन्थ कबीर 'बीजक माना जाता है इसमें रमैनी, साखी, तथा पद संग्रहीत। कबीर पढ़े लिखें परन्तु उनका हृदय ज्ञान की ज्योति से जगमगाता था डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कबीर के व्यक्तित्व का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि वे सिर से पैर तक मस्तमौला थे। मस्त जो पुराने कृत्यों का हिसाब नही रखता वर्तमान कर्मो ने सर्वस्व नही समझता और भविष्य में सब कुछ झाड़ फटकार निकल जाता है जो दुनियादार किये किराए का लेखा–जोखा दुरूस्त रखता है। वह मस्त नहीं हो सकता है जो इश्क का मतवाला है, वह दुनिया के माप जोख से अपनी सफलता का हिसाब नहीं करता।

डॉ0 राम कुमार वर्मा ने कबीर की प्रतिभा की चर्चा करते हुए लिखा है इसमें सन्देह है कि कबीर की कल्पना के सारे चित्रो का समझने की शक्ति किसी में आ सकेगी अथवा नहीं जो हो कबीर का बीजक पढ़ जाने के बाद यह स्पष्ट रूप से ज्ञात हो जाता है कि कबीर के पास कुछ ऐसे चित्रों का खजाना है जिसमें हृदय में उथल पुथल मचा देनें की बड़ी भारी शक्ति है हृदय आश्चर्यचकित होकर कबीर की बातों को सोचता ही रह जाता है।''

कबीर को हिन्दी काव्य क्षेत्र में निर्गुण धारा का प्रवर्तक माना जाता है। ज्ञानाश्रयी काव्यधारा के सर्वश्रेष्ठ कवि सन्त कबीर भक्त होने के साथ–साथ समाज सुधारक भी थे। वे मूर्ति पूजा में विश्वास नहीं करते थे–

**मनुआ कैसा, बावरा, पाथर पूजन जाई।**
**बाते घर चक्की भली, जाका पीसा खाई।।**

हिन्दू मुसलमान दोनो जातियों के धार्मिक आडम्बरों की उन्होनें खुलकर निन्दा की है। वे मुसलमानों को कड़े शब्दों में फटकराते हुए कहते है कि–

**दिन में रोजा रखत हो राति हनत हो गाइ**
**एक खून, एक बंदगी, कैसे खुशी खुदाइ।।**

'जो तू बागन बामनी जाया आन बाट है क्यों नहि आया कहकर उन्होने ढोंगी ब्राम्हणों को भी चुनौती दी है कबीर की सरल आत्मा में धर्म के ठेकेदारों के प्रति घृणा भर गई थी। उन्होने हिन्दुओं तथा मुसलमानों को फटकारते हुए कहा–

**कह हिन्दु मोहि राम पियारा, तुरक कहे रहिमाना**
**आपस में दोउ लरि–लरि मुए, मरम न काहू जाना।।**

कबीर उच्चकोटि के साधक थे डा0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है– साधना के क्षेत्र में वे युग–युग के गुरू थे और साहित्य के क्षेत्र में भविष्य द्रष्टा। एक अन्य विद्वान ने उन्हे मानवता का प्रथम कवि कहा है। कबीर भक्त कवि उपदेशक साधु और सन्त सभी कुछ थे।

ज्ञान की खोज में उनका सम्पूर्ण जीवन व्यतीत हुआ। उन्होने ब्रह्म का साक्षात्कार कर लिया था सांसारिक आर्कषण उन्हे अपनी ओर आकर्षित करने में असमर्थ थे उन्होने कविता के लिये कविता की रचना नही की। उन्हें न पांडित्य प्रदर्शन की लालसा थी और न आचार्य बनने की अभिलाषा ही।

कबीर के काव्य में ईश्वरीय प्रेम की अभिव्यक्ति अत्यन्त सशक्त रूप में मिलती है। उनके अनुसार मानव –जीवन की सार्थकता ईश्वर–दर्शन में है। कबीर ने निर्गुण ईश्वर 'राम' कहकर पुकारा है कबीर के अनुसार राम के सच्चे प्रेम से ही पाया जा सकता है प्रेम की साधना वस्तुतः विरह की साधना है । कबीर कहते है कि प्रेम का नाम तो बहुत लोग लेते है, पर सच्चा प्रेम क्या है,इसे नही जानते। आठों पहल राम के ध्यान मे डूबे रहना ही सच्चे प्रेम का लक्षण है।

**आठ पहर मीना रहै, प्रेम कहावे सोच।**

राम की बाट जोहते–जोहते साधक की आंखो में झाड़ पड़ जाती है तथा उसकी जीभ में छाले पड़ जाते है–

**अंखड़िया झाड़ पड़ी पंथ निहारि निहारि**
**जीभड़िया छाला पड्या, राम पुकारि–पुकारि।।**

भक्त प्रतीक्षा करते करते अधीर हो उठता है। प्रियतम का विरह उसके लिये असह् हो जाता है। वह विरह की अग्नि में स्वयं को जला डालने का निश्चय करता है–

**यह तन जारौं मसि करो, ज्यूं धुआं जाय सरगि।**
**पुहुप बास से पातरा, ऐसो तत्व अनूप।।**

**कबीर के काव्य का कलापक्ष**

कबीर ने जो कुछ कहा है वह स्वानुभूति के बल पर कहा है, फलतः वाणी मे बड़ी सजहता एवं मार्मिकता है जो हृदय पर सीधी चोट करती है कबीर पढ़े लिखे नहीं थे इसलिये कुछ लोग उनकी भाषा को अनगढ़ कहते है। वास्तव में उनकी भाषा में कृत्रिमता नही है। व्यापक देशाटन के कारण उनकी भाषा में विभिन्न प्रादेशिक बोलियों का सम्मिश्रण मिलता है। उन्होने स्वयं अपनी भाषा को पूरबी कहा है परन्तु उसमें अवधी ब्रज , खड़ी बोली राजस्थानी पंजाबी ,संस्कत फारसी आदि का मिश्रण दीख पड़ता है इसी कारण आचार्य शुक्ल जैसे विद्वान उनकी भाषा को सधुक्कड़ी या पंचमेल खिचड़ी कहते है। डा0 हजारी प्रसाद द्विवेदी भाषा पर कबीर का असाधारण अधिकार मानते है। वे वाणी के डिक्टेटर है। जिस बात को उन्होने जिस रूप से प्रकट करना चाहा। उसी रूप से में भाषा से कहलवा लिया ।

कबीर की शैली मे गजब का प्रवाह है। वह किसी पहाड़ी झरने की भांति अपने तेज बहाव में हमें बहाती ले चलती है। कबीर ने रस –अलंकार आदि का जानबूझ कर प्रयोग नही किया, परन्तु वे सभी तत्व

उनकी वाणी में अपने आप आ गये है। अनुप्रास ,यमक, उपमा, रूपक, विरोधाभास आदि अनेक अलंकार अपने स्वाभाविक रूप से उनके काव्य को शोभा प्रदान करते हैं। अपने सिद्धान्त–प्रतिपादन के लिए कबीर ने प्रतीकों का सुन्दर प्रयोग किया हैं उदाहरणार्थ–

**जल में कुभ, कुंभ में जल है,**
**बाहर भीतर पानी।**
**फूटा में कुंभ जल जलहि समाना,**
**यह तथ कथी गियानी।।**

कबीर के जीवन और सन्देश के समान उनकी कविता भी आडम्बर रहित हैं। उसकी यह सादगी ही उसकी सबसे बड़ी शक्ति है। भाषा में विषयानुकूल माधुर्य और ओजगुण उनकी अभिव्यक्ति को अतीव हदयग्राही बना देते है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार, 'हिन्दी–साहित्य के हजार वर्षो के इतिहास में कबीर जैसा व्यक्तित्व लेकर कोई लेखक उत्पन्न नहीं हुआ। महिमा में यह व्यक्तित्व केवल एक ही प्रतिद्वन्द्वी जानता है– तुलसीदास।'

रैदास–रामानंद के शिष्यों में कबीर आदि संतों की तरह रैदास का जीवनवृत्त कुछ निश्चित रूप से नहीं प्राप्त होता हैं धन्ना और मीरा के कुछ पदों में इनका उल्लेख मिलता है। इस आधार पर ये उनके समकालीन कहे जा सकते है। दूसरी बात यह है कि उनके पदों में भी अन्य मध्यकालीन संतों की तरह सामाजिक विडम्बनाओं के प्रति तीखा स्वर है। उनकी कविताओं में जाति–प्रथा, कर्मकाण्ड, मुर्ति–पूजा, तीर्थ–यात्रा आदि बाह्यचारों के प्रति तीखा स्वर है। निश्छल भाव से भक्ति की ओर उन्मुख करने का प्रयत्न करते हुए उनका कहना है कि

**अब कैसे छूटै राम, नाम रट लागी।**
**प्रभुजी तुम चंदन हम पानी, जाकी अंग–अंग बास समानी।**
**प्रभुजी तमु घन बन हम मोरा, जैसे चितवत चन्द चकोरा।**
**प्रभुजी तुम दीपक हम बाती, जाकी जोति बरै दिन राती।**
**प्रभुजी तुम मोती हम धागा, जैसे सोने मिलत सुहागा।।**

**गुरू नानकदेव**

गुरू नानकदेव नानक पंथ के प्रवर्त्तक थे। उनकी संवत् 1526 के वैशाख मास की तृतीया को तिलवंडी गाँव में हुआ था आम बचपन से अध्यात्म की ओर झुक गए। उनकी बानियों को संग्रह आदि 'ग्रन्थ' के 'महला' नामक खंड में है। इनकी रचनाओं की यह विशेषता रही कि उनमें धार्मिक विश्वास, नाम–स्मरण, एकेश्वरवाद, परमात्मा की सर्वव्यापकता, विश्व–प्रेम, नाम की महत्ता आदि है। इनकी प्रवृत्ति अति सरल अहंभाव शून्य आदि रही। इनका साहित्य मुख्य रूप से पंजाबी में है।

**संत दादू दयाल**

दादू पंथ के प्रवर्त्तक संत दादू दयाल का जन्म गुजरात राज्य के अहमदाबाद नगर में संवत् 1601 में स्वीकार किया जाता हैं और मृत्यु संवत् 1660 को राजस्थान के नराणा गाँव में, जहाँ इनके अनुयायियों का प्रधान मठ 'दादू द्वारा' है। ये जाति के धुनिया थे। इनकी बनियों का संग्रह 'हरडेवाणी' नाम से है। इनके प्रमुख शिष्यों में रज्जब थे। इनकी रचनाओं में ईश्वर की सर्वव्यापकता, सद्गुरू की महिमा, संसार की असारता आदि का प्रभावशाली उल्लेख है। इसके साथ ही इनकी कविताओं में निर्गुण निराकार ईश्वर के प्रति प्रेमभाव भरा हुआ है।

एक उदाहरण देखिए–

**भाई रे! ऐसा पंथ हमारा।**
**द्वै पखरहित पंथगह पूरा अबरन एक अधारा।**
**समदृष्टि सूँ भाई सहज में आपहिं आप विचारा।।**
**मैं तो मेरी यह मति नाहीं निरवैरी निरविकारा।।**
**काम कल्पना कदेन कीजै पूरन ब्रह्म पियारा।**
**एहिपथि पहुँचि पार गहि दादू सो तब सहज संभारा।।**

**संत सुन्दरदास**

ये संत दादू दयाल के सर्वप्रधान शिष्य थे। इनका जन्म संवत् 1653 में जयपुर की प्राचीन राजधानी धौसर नगर में हुआ था। इन्होंने बंगाल, द्वारिका, बदरीकाश्रम और मध्य प्रदेश तक यात्रा करते हुए दादू के सिद्वान्तों का प्रचार–प्रसार किया और ग्रन्थ रचना भी किए। 'सुन्दर–विलाप' इनका सर्वाधिक प्रसिद्ध ग्रंथ है। इन्होंने अपनी कविताओं के द्वारा निर्गुण–सगुण विवाद को आर्थिक रूप में प्रस्तुत किया। लोकजीवन की रूढ़ियों के विरोध और विद्रोह का स्वर इनमें नही रहा। उनकी रचनाओं के पढ़ने से लगता है कि निर्गुण भक्ति काव्यशास्त्रीय बंधन में बँधने के लिए तैयार होने लगता था–

**"गेह तज्यो अरू नेह तज्यों पुनि**
**खेंह लगाई कै देह संवारी।**
**मेह सहें सिर सीत सहे तन**
**धूप सभे जो प्रचागिनि बारी।।**
**भूख सही रहि रूख तरै पर,**
**सुन्दरदास सबै दुख भारी।**
**डासन छाँड़ि कै कासन ऊपर**
**आसन मारयों तै आसन भारी।।**

**संत मलूकदास**

मध्यकालीन संतों में संत मलूकदास का जन्म इलाहाबाद केकड़ा गाँव में संवत् 1631 में हुआ था। इनकी मृत्यु संवत् 1739 में 106 वर्ष की दीर्धायु में हुई। यद्यपि इन्होंने अनेक ग्रंथ लिखे, तथापि 'रत्नखान' और 'ज्ञान बोध' ग्रन्थ अधिक प्रसिद्ध हैं। इन्होनें विभिन्न कथाओं के दृष्टान्त द्वारा लोगों को इन्द्रिय निग्रह, ब्रहमोपासना, आत्मबोध, वैराग्य आदि का ज्ञान दिया। एक उदाहरण देखिए –

**"कहत मलूक जो बिन सिर खेपै सो यह रूप बखानै।**
**पा नैपा के अजब कथा, कोई बिरला केवट जानै।**
**कहत मलूक निरगुन के गुनकोइ बड़भागी गावै।**
**क्या गिरही औ क्या बैरागी जेहि हरि देये सो पावै।**

**प्रमुख प्रवृत्तियाँ**

संतकाव्य की प्रमुख प्रवृत्तियाँ निम्नलिखित है–

**भक्ति–निरूपण**

सन्त काव्य का मूल आधार (निराकार) ब्रह्म की उपासना है। सन्त कवियों ने यह स्पष्ट किया कि ईश्वर सर्वत्र विद्यमान है। उसका कोई विशेष रूप नहीं है तथा साधना के द्वारा निर्गुण ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता हैं ईश्वर व्यक्ति के हृदय में भी विराजमान है। वह

अविनाशी तथा सर्वशक्तिमान है। ब्रह्म के विषय में अपना अनुभव बताते हुए कबीर कहते है–

**जाके मुख माथा नही, नाहि रूप कुरूप।**
**पुहुप बास से पातरा ऐसा तत्त अनूप।।**

ज्ञानमार्गी कवियों के अनुसार ईश्वर का वर्णन शब्दों में नही किया जा सकता। वह केवल अनुभवगम्य हैं। प्रेम तथा योग साधना से उसकी अनुभूति हो सकती है। वह अलख और निरंजन है। वह अक्षय अर्थात् अविनाशी है। कबीर के शब्दों में,

**निर्गुण राम जपहु रे भाई।**
**अविगत की गति लखि न नाई।।**

**सामाजिक चेतना**

सन्त कवियों ने तत्कालीन समाज में प्रचलित धार्मिक आडम्बरों का प्रबल विरोध किया। इनसे पूर्व नाथ योगियों ने भी धार्मिक पाखण्डों की आलोचना की थी। ये कवि मूर्ति–पूजा, व्रत, तीर्थ, रोजा आदि में विश्वास नहीं रखते थे। कबीर ने मूर्ति–पूजा का विरोध करते हुए कहा है–

**दुनिया ऐसी बावरी, पाथर पूजन जाय।**
**घर की चकिया कोई न पूजे, जेहि का पीसा खाय।।**

इन कवियों ने धर्म के नाम पर आडम्बर करने वालों का फटकारा। कबीर के एक पद की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं–

**मुखड़ा क्या देखे दरपन में**
**तेरे दया धरम नहीं मन में**
**ऐंठी धोती पाग लपेटी तेल चुआ जुलफन में**
**गली–गली की राखी रिझाई, दाग लगाया तन में।**

इन कवियों माला जपने के स्थान पर हृदय की शुद्धता पर बल दिया। कबीर के शब्दों में,

**कबिरा माला काठ की, कहि समुझावे तेहि।**
**मन फिरावे आपना, कहा फिरावे मोहि।।**

ज्ञानमार्गी कवि जाति–पाँति में विश्वास नहीं करते थे। उनका विश्वास था कि प्रभु सर्वव्यापक है। वह प्रत्येक जीव हृदय में विराजमान है। ईश्वर की दृष्टि में सभी मनुष्य बराबर हैं। जो व्यक्ति प्रभु का स्मरण करता है, वह उसे प्राप्त कर लेता हैं कबीर ने स्पष्ट शब्दों में

**जाति–पाँति पूछे नहिं कोई।**
**हरि को भजे सो हरि को होई।।**

अधिकांश ज्ञानमार्गी कवि समाज में नीची मानी जाने वाली जातियों से सम्बन्ध रखते थे। कबीर का सम्बन्ध जुलाहा जाति से था, तो रैदास चमार जाति से सम्बन्धित थे। हिन्दू–मुसलमानों तथा सभी जातियों में प्रेम स्थापित करना भी इन कवियों का उद्देश्य था। ये कवि ब्राह्मणों को जाति के आधार पर कोई महत्व नहीं देते थे। इन्होंने समाज के तथाकथित उच्चजाति के लोगों को चुनौती देते हुआ कह,

**जो तू बामन बामनी जाया, आन बाट है क्यों नही आया।**
**जो तू तुरक तुरकिनी जाया, भीतर खतना क्यों न कराया।**

सन्त कवियों के मन में समाज–सुधार की भावना भी प्रबल रूप से विद्यमान थी। इन सन्तों की साधना न तो व्यक्तिगत थी और न शास्त्रीय ही। इन कवियों ने अपने युग में प्रचलित सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए वाणी की शक्ति का प्रयोग किया। इन्होंने धर्मभीरूता, जाति–पांति बन्धन, छुआछूत, पाखण्ड–आडम्बर, अन्धविश्वास आदि को दूर करने का प्रयास किया। ये कवि हिन्दू–मुसलमानों को सम दृष्टि से देखते थे। कबीर ने मांसाहार का विराध करते हुए कहा है–

**बकरी पाती खात है, तिनकी काढ़े खात।**
**जो जन बरकी खात हैं, तिनकी कौन हवाल।।**

कबीर ने हिन्दुओं तथा मुसलमानों को सच्चे धर्म का अनुसरण करने की प्रेरणा दी है –

**हिन्दू कहे मोहि राम पियारा**
**तुरक कहे रहमाना।**
**आपस में दोऊ लरि–लरि मुरू**
**मरन व काहू जाना।**

**सद्गुरू की महत्ता**

सन्त कवियों ने सद्गुरू की महिमा का बहुत अधिक वर्णन किया हैं इन सन्त–कवियों के अनुसार सद्गुरू की कृपा साधक के लिए अत्यन्त आवश्यक है। उसके बिना साधक को ईश्वर प्राप्ति नहीं हो सकती है। इन सन्तों का विश्वास है। कि ईश्वर के रूठ जाने पर साधक की रक्षा हो सकती है, परन्तु गुरू के रूठ जाने पर उसके लिए कभीं भी ठिकाना नहीं रहता। कबीर ने गुरू गोविन्द से भी अधिक महत्व देते हुए कहा है कि

**गुरू गाविन्द दोऊ खड़े, का के लागूँ पाँय।**
**बलिहारी गुरू आपणे, जिन गोविन्द दियो बताय।।**

**संतकाव्य में राम**

संतकाव्य में राम का उल्लेख सगुण–काव्य की तरह अवतारी पुरूष के रूप में न होकर निरूपाधि ब्रह्म के रूप में ही हुआ है। वे दशरथ–पुत्र राम न होकर ब्रर्हास्वरूप राम हैं कबीर ने यह मत इसी तथ्य का पूरक है –

**"दशरथ सूत तिहुँ लोक बखाना।**
**राम का मरम कोउ नहीं जाता।।**

इस संत कवियों के राम अगम, अगोचर, अतीन्द्रिय, अविनाशी और अनिर्वचनीय हैं वे तो जन्म–मरण से भी परे है–

**"जाके मुँह माथा नही, नाहीं रूप–कुरूप।**
**पुहुप बाँस का पातरा, ऐसा तख अनूप।।"**

**रहस्यवाद**

दर्शन के क्षेत्र में जो अद्वैतवाद है, साहित्य के क्षेत्र में वही रहस्यवाद है। सन्त–काव्य में भारतीय रहस्यवाद के दर्शन होते हैं। कबीरदास ने ब्रह्म को सत्य तथा जगत् का मिथ्या कहा है। उन्होंने आत्मा तथा परमात्मा के मिलन में माया को बाधक माना है। ज्ञानमार्गी कवियों के रहस्यवाद में प्रेम–भाव की प्रधानता हैं।

**उद्देश्य**

संत काव्य की पृष्ठभूमि तथा संत काव्य के स्वरूप एंव विशेषताओं का परिचय प्रस्तुत लेख मे दिया गया है संत काव्य के वस्तु एवं शिल्प पक्ष के विश्लेषण के साथ संतकाव्य धारा के महत्व का प्रतिपादन प्रस्तुत लेख का प्रमुख उद्देश्य है।

**निष्कर्ष**

मध्यकालीन संतो ने भक्ति को यह स्वरूप प्रदान किया जिससे व्यापक और समग्र धार्मिक सांस्कृतिक आन्दोलन का रूप खडा हो गया ।

इससे हिन्दू मुसलमान का चला आता हुआ पार्थक्य सामान्यतः भक्ति मार्ग की ओर हो गया। इसके प्रभाव से लोक हृदयों में सामाजिक सरसता की आशा जागी। इन सन्तों की वानियों के भाव भाषा और शैली बड़े ही काव्यत्व एवं उत्कर्ष के रूप मे है। इनकी भाषा सहज और लोकोन्मुख रही।

**सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**

1. *समकालीन कविता का परिप्रेक्ष्य – डां0 रेवती रमण – 1994, नवनीत प्रकाशन इलाहाबाद पृ0 72*
2. *कवि परम्परा – तुलसी से त्रिलोचन – प्रभाकर क्षोत्रिय –2013 भारतीय ज्ञान पीठ नई दिल्ली –पृ0´–22,23*
3. *कविता का पश्यन्ती निकष– नयत्व – विजय रंजन – 2014, भारती पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स फैजाबाद –पृ078*
4. *समकालीन सृजन सन्दर्भ – भारत भारद्वाज – 2000, वाणी प्रकाशन , नयी दिल्ली पृ0–46,47*
5. *कबीर साखी सुधा– डॉ0 वासुदेव सिंह – 1993 अभिव्यक्ति प्रकाशन इलाहाबाद –पृ053, 54, 55*
6. *हिन्दी साहित्य का इतिहास – सं0 डॉ0 नगेन्द्र डॉ0 हरदयाल नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली पृ0 126,127*